विज्ञान, वैज्ञानिक मानसिकता और पाठ्यपुस्तकें

पाठशाला द्वारा आयोजित इस संवाद का विषय था– विज्ञान, वैज्ञानिक मानसिकता (साइंटिफ़िक टेम्परामेंट) और पाठ्यपुस्तकें। इस संवाद में हमारे साथ दो विज्ञान शिक्षिकाएँ शामिल हुई थीं– शासकीय माध्यमिक विद्यालय, मटका, ज़िला बेमेतरा से मंजू और शासकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय, पांडराभाटा, रायपुर से राधिका महोबिया। इसके अलावा, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के छत्तीसगढ़ क्षेत्र से हुमा नाज़ सिद्दीकी और जयपुर, राजस्थान से मुकेश पायक थे। इस संवाद के फ़ेसिलिटेटर अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन से राकेश तिवारी थे। –सं.

राकेश तिवारी : विज्ञान शिक्षा पर भारत में स्वतंत्रता के बाद से ही ज़ोर दिया जाता रहा है। इस ज़ोर दिए जाने का एक मुख्य मक़सद साइंटिफ़िक टेम्परामेंट यानी वैज्ञानिक चिन्तन, वैज्ञानिक दृष्टिकोण या वैज्ञानिक स्वभाव का विकास है। इस संवाद के लिए पहला बड़ा सवाल यह है, साइंटिफ़िक टेम्परामेंट का आशय क्या है? और दूसरा, बच्चों में, नागरिकों में वैज्ञानिक चिन्तन का विकास क्यों ज़रूरी है? ये दोनों सवाल दिलचस्प तो हैं ही, साथ ही इतने व्यापक भी हैं कि इनमें विज्ञान की प्रकृति, विज्ञान का सामाजिक व सांस्कृतिक ताना-बाना, विज्ञान का इतिहास, आदि के साथ-साथ स्कूलों में शिक्षा और विज्ञान शिक्षा जैसे मसले भी शामिल हैं। ये सभी मसले इन सवालों को जटिल बना देते हैं। स्कूल में काम करने वाले हम सभी लोगों को इन सवालों, और इनसे जुड़े पहलुओं को अपने-अपने काम के अनुभवों के सन्दर्भ में समझने की ज़रूरत है। आशा है, यह संवाद इसमें मददगार होगा। पहला सवाल है, वैज्ञानिक मानसिकता, वैज्ञानिक चिन्तन इन शब्दों से क्या आशय है?

मुकेश पायक : मैं विज्ञान का विद्यार्थी और शिक्षक दोनों ही रहा हूँ। वैज्ञानिक मानसिकता व्यक्तित्व से जुड़ा मसला है। सबसे पहले सन 1946 में पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने अपनी किताब *डिस्कवरी ऑफ़ इंडिया* में वैज्ञानिक मानसिकता शब्द का इस्तेमाल किया था। ये शब्द तभी से ज़्यादा चर्चा में आए। ये शब्द एक ऐसे व्यक्ति की कल्पना करते हैं जिसमें तार्किक चिन्तन, आलोचनात्मक चिन्तन, और तर्कसंगत चिन्तन, इन सभी का समावेश हो। जब देश स्वतंत्र हुआ था (वैसे तो सदैव ही) हमें ऐसे नागरिकों की ज़रूरत थी जो उनको मिल रही जानकारी की सत्यता की जाँच कर सकें। नागरिक यह जानता हो कि जो जानकारी उसे मिल रही है वह कितनी सही है, और यह पता

करने के प्रमाण व तर्क पर आधारित तरीक़े और प्रक्रिया क्या होगी। वह यह समझे कि किसी भी बात को परखते समय दिमाग़ खुला रखना है, किसी भी तथ्य को बिना जाँचे स्वीकार नहीं करना है, और यह मानकर चलना है कि जो पहले सही था या जो आज सही माना जाता है, वह समय व नए ज्ञान के साथ बदल सकता है।

यह अपेक्षा है कि देश के हर नागरिक में सवाल व तर्क करने की शक्ति हो। वह चीज़ों को ध्यान से देखे, समझे और अन्धविश्वास या पूर्वाग्रह से प्रभावित न हो। वह विभिन्न मसलों को वर्गीकृत कर पाए, उनकी तुलना कर पाए, पैटर्न पहचान पाए, और पैटर्नों में कुछ सम्बन्ध बना पाए। इस सबकी विज्ञान ही नहीं बाक़ी विषयों में भी ज़रूरत होती है।

राकेश तिवारी : हुमा, आप इस बारे में कुछ कहना चाहेंगी?

हुमा नाज़ सिद्दीकी : जो अभी तक कहा गया है, मैं उसमें एक और पहलू जोड़ना चाहती हूँ। वैज्ञानिक सोच किसी विषय या विषय-वस्तु के दायरे में न रहकर एक सोच या नज़रिया विकसित करने की बात है। ऐसा नज़रिया जो शायद किसी भी परिस्थिति में एक बेहतर निर्णय लेने के लिए, किसी समस्या का बेहतर समाधान खोजने के लिए और बहुत सारी परिस्थितियों में नैतिक ढंग से सोचने, समझने और निर्णय लेने की बात करता है। इसमें तर्कसंगतता, जिज्ञासुपन, निष्पक्षता का होना भी शामिल है। एक ऐसा नज़रिया जो अलग-अलग सामाजिक, आर्थिक और परिवेशीय परिस्थितियों में भी व्यक्ति को एक बेहतर निर्णय लेने के लिए प्रेरित करे।

राकेश तिवारी : वैज्ञानिक मानसिकता, वैज्ञानिक चिन्तन का ताल्लुक क्या दूसरे विषयों से भी है? यदि है तो किस-किस तरह का? और इस ताल्लुक के सन्दर्भ में वैज्ञानिक दृष्टिकोण या स्वभाव के बारे में आप क्या कहेंगे?

मंजू : वैज्ञानिक मानसिकता का दूसरे विषयों से भी ताल्लुक है। जैसा कि अभी कहा गया, वैज्ञानिक सोच एक ख़ास विषय से ही नहीं जुड़ी है। हर विषय, मुद्दे के सन्दर्भ में यह लागू होती है। हमारी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में कई घटनाएँ होती हैं। उदाहरण के लिए, क्या थाली बजाने से कोरोना भाग सकता था? या फिर कई और रूढ़िवादी बातें हैं। जैसे– नवजात की जीभ पर शहद से धार्मिक चिह्न लिखने से वह बीमार नहीं होता, इत्यादि। वैज्ञानिक सोच, नज़रिया ऐसे सभी तथ्यों पर सवाल उठाना, और इनकी जाँच करना भी है। माने, यह हर परिवेश की हर घटना, परिस्थिति में समाहित होता है।

राकेश तिवारी : मुकेशजी, आप विषय से सम्बन्धित कुछ उदाहरण इसमें जोड़ना चाहेंगे?

मुकेश पायक : वैज्ञानिक मिज़ाज दूसरे विषयों से कैसे जुड़ता है, इसका एक उदाहरण देता हूँ। इतिहास, जो घटनाएँ घटित हुई हैं, उनका पुनर्निर्माण है। इसमें कुछ उपलब्ध

जानकारियों के आधार पर हम आगे साक्ष्य ढूँढ़ते हैं, उनका एक दूसरे के साथ सम्बन्ध देखते हैं, और इन सभी के आधार पर विश्लेषण करने की कोशिश करते हैं। भूगोल में भी हम कुछ संकेतों को देखकर सम्बन्ध देखते हैं, और यह पता करने का प्रयास करते हैं कि जलवायु पैटर्न कैसा होगा, या फिर यदि सतह के नीचे खनिज मिल सकते हैं तो कौन-से, इत्यादि। इतिहास में पुराने प्रतिलेखों से, और जीवशास्त्रीय इतिहास में जीवाश्म से वैज्ञानिक विधियों का सहारा लेकर समझ बनाते हैं कि वे किस काल के हैं, और उनके आधार पर क्या कहा जा सकता है। एक तरह की परिकल्पना, और फिर जो कहा गया है उसकी पुष्टि के लिए दूसरे स्रोतों से मिली जानकारी के सन्दर्भ में उसे देखना। यानी, वैज्ञानिक प्रक्रिया व मिज़ाज हमें सभी विषयों में दिख रहा है।

वैज्ञानिक सोच किसी विषय या विषय-वस्तु के दायरे में न रहकर एक सोच या नज़रिया विकसित करने की बात है। ऐसा नज़रिया जो शायद किसी भी परिस्थिति में एक बेहतर निर्णय लेने के लिए, किसी समस्या का बेहतर समाधान खोजने के लिए और बहुत सारी परिस्थितियों में नैतिक ढंग से सोचने, समझने और निर्णय लेने की बात करता है। इसमें तर्कसंगतता, जिज्ञासुपन, निष्पक्षता का होना भी शामिल है।

राकेश तिवारी : ऐसा भी होता है कि जो विज्ञान पढ़ते-पढ़ाते हैं, या इस क्षेत्र में काम करते हैं, कभी-कभी उनमें भी साइंटिफ़िक टेम्परामेंट नहीं दिखता। वहीं दूसरे विषय में काम करने वालों के जीवन में वैज्ञानिक चिन्तन बख़ूबी शामिल होता है। राधिकाजी, आप बताएँगी ऐसा क्यों होता होगा?

राधिका महोबिया : यह सही है। मैं कई उदाहरण दे सकती हूँ, पर एक और मसला समाज की मान्यताओं का भी है। कक्षा आठ में विज्ञान का एक अध्याय है 'किशोर अवस्था'। इस किशोर अवस्था के बारे में शिक्षक बच्चों को स्पष्टता से नहीं कह पाते। हम जानते हैं कि इस अवस्था में बहुत सारे शारीरिक परिवर्तन हो रहे होते हैं, फिर उनको लेकर बच्चों में भ्रान्तियाँ भी होती हैं। बच्चे हिचक की वजह से पूछ नहीं पाते हैं, और शिक्षक भी उस पाठ को पढ़ाने से बचते हैं। जैसे– माहवारी के बारे में बातचीत, उस दौरान क्या-क्या बातें ध्यान रखनी चाहिए, आदि। इस साल मैंने बच्चों के साथ इसपर चर्चा की थी। पर कई शिक्षक ऐसे भी हैं जो कहते हैं कि माहवारी के दौरान रसोई में नहीं जाना चाहिए, बाल नहीं धोना चाहिए, आदि। वे कहते हैं कि ये हमारी परम्पराएँ हैं, और हम इन्हें छोड़ नहीं सकते हैं। किताब में जो बातें लिखी हैं वे अपनी जगह हैं, लेकिन जो हमारे व्यवहार में हैं, हमारी परम्पराएँ हैं, हमारे पूर्वजों ने जो नियम हमारे लिए बनाए हैं, हम उनको नहीं बदलना चाहते हैं।

राकेश तिवारी : हुमाजी, आप इसमें अगर कुछ जोड़ना चाहें?

हुमा नाज़ सिद्दीकी : विज्ञान से इतर विषयों में भी वैज्ञानिक मानसिकता का होना काफ़ी अहम मसला है। अकसर विज्ञान शिक्षा तथ्यों और सिद्धान्तों पर केन्द्रित होती है जबकि वैज्ञानिक मानसिकता से आशय आलोचनात्मक सोच या चिन्तन के साथ-साथ समस्या समाधान भी है। हमारी विज्ञान कक्षाओं को पाठ्यपुस्तक के तथ्य पहुँचाने तक सीमित कर दिया जाता है। कॉलेज व स्कूल में काम के अनुभवों के आधार पर दो उदाहरण रखना चाहूँगी। कॉलेज में विद्यार्थियों को जब भी अवलोकन के बाद कोशिका का चित्र बनाने को कहा जाता, वे पाठ्यपुस्तक में दिया चित्र ही बनाते। उन्हें क्या दिख रहा है उस बारे में सोचते ही नहीं थे।

चित्र : प्रशांत सोनी

उसी तरह का माध्यमिक कक्षाओं का अनुभव है। चूँकि पाठ्यपुस्तक में लिखा है कि दिल 1 मिनट में 72 बार धड़कता है। इसके अवलोकन के बाद भी बच्चों ने, यहाँ तक कि शिक्षकों ने भी, पहले से ही यह मान लिया कि 72 बार ही सही है। इसलिए किसी का अवलोकन फ़र्क़ नहीं आया। और फिर यह भी नहीं सोचा गया कि क्या सभी लोगों की हर परिस्थिति में धड़कन बराबर होगी।

वैसे अपने आम जीवन में आसपास के बदलावों को देखकर यह स्वाभाविक सोच होती है कि यह बदलाव क्यों हुए, और इनसे क्या होगा। मान लीजिए, किसी गाँव में दस साल पहले पाँच तालाब हुआ करते थे, और आज दो ही हैं तो कहीं-न-कहीं उसके कारणों पर सोचा जाता है और इसे सामाजिक परिवेश से जोड़कर समझने का प्रयास होता है। इनमें अनजाने में ही सोचना, तर्क करना, चिन्तन करना, और समस्या समाधान, खोजने जैसी प्रक्रियाओं में शामिल होता रहता है। कक्षा के विज्ञान का जुड़ाव ज़िन्दगी से नहीं होता इसीलिए शायद विज्ञान वाले लोगों को अतिरिक्त कुछ नहीं मिलता।

मुझे यह भी लगता है कि विज्ञान शिक्षण को सामाजिक और परिवेशीय घटकों से जोड़कर देखना चाहिए। मिसाल के तौर पर, अगर हम इलेक्ट्रिसिटी पढ़ते हैं तो यह सोचना कि परिवेश में इसके क्या उदाहरण हैं; इलेक्ट्रिसिटी कैसे बनती है; कैसे यह एक जगह से दूसरी जगह पहुँचती है; अगर तार में बिजली होती है तो उसपर बैठी चिड़िया मरती क्यों नहीं; पानी से बनाई बिजली, हवा से बनाई बिजली और बादल से गिरी बिजली क्या एक हैं; आदि बहुत-से सवाल हैं। जो विज्ञान हम पढ़ रहे हैं उसका दूसरे विषयों व परिवेशीय सवालों के साथ समावेशन बहुत महत्त्वपूर्ण है।

राकेश तिवारी : इस बातचीत में दिख रहा है कि विज्ञान और वैज्ञानिक दृष्टिकोण का जुड़ाव हमारे समाज, संस्कृति, परिवेश से है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि तार्किक सोच और रीति-रिवाज या परम्परा के द्वन्द्व को लेकर हम क्या करें। किशोरावस्था में हो रहे शारीरिक परिवर्तन, मानव शरीर के बारे में जानना, पुरानी चली आ रही परम्पराओं पर सवाल उठाना, ऐसे कई तरह के मुद्दों पर बातचीत होना ज़रूरी है। इन मुद्दों पर बात करने में शिक्षकों में झिझक होने पर बातचीत होनी चाहिए। क्या बातचीत न होने से इन मुद्दों से बचा जा सकता है? यह मसला इस बात से भी जुड़ा है कि क्या शिक्षा का उद्देश्य सिर्फ़ विषयों में महारत हासिल करना है, या अलग-अलग विषयों के रास्तों से गुज़रते हुए तार्किक, मानसिक, खुले विचार वाले व्यक्तित्व गढ़ने की ओर बढ़ना है। 'शिक्षित होने' और 'विषय में महारथ हासिल करने' में क्या कोई अन्तर है?

मुकेश पायक : मैं एक बात कहना चाहता हूँ कि हम एकदम से आज की स्थिति में नहीं

पहुँचे हैं। आज जिन उड़ने वाली मशीनों का हम उपयोग कर रहे हैं उनके बारे में आज से 200 से 300 साल पहले ही सोचा जाने लगा था। लोगों ने उड़ने वाली मशीन के बारे में सोचा, वो कैसी होगी उसकी कुछ इनिशियल डिज़ाइन उन्होंने चित्रों के माध्यम से बनाई थीं। फिर उन्होंने काफ़ी सारे चित्र बनाए, और धीरे-धीरे बढ़ते हुए आज हम इन मशीनों का उपयोग कर रहे हैं। अगर खुले दिमाग़ से नहीं सोचेंगे तो यह सब नहीं हो पाएगा।

राकेश तिवारी : वैज्ञानिक दृष्टिकोण और स्वभाव का विकास, ये दोनों ही बातें विज्ञान की समझ व शिक्षा के लक्ष्य के रूप में शामिल होनी चाहिए। यह हो पाए, इसके लिए विज्ञान शिक्षण का तरीक़ा क्या होना चाहिए? हुमाजी, आप इसपर अपने विचार रखें।

हुमा नाज़ सिद्दीकी : महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यह सब करने के लिए कक्षा में विज्ञान शिक्षण का तरीक़ा क्या हो। पहला यह कि कक्षा में ऐसा माहौल रचा जाए जहाँ बच्चे सिर्फ़ तथ्य पढ़कर याद न करें। वे किताब के प्रयोगों को जस का तस न दोहराएँ बल्कि ख़ुद प्रयोग करके देखें। मिसाल के तौर पर, अभी विद्यार्थी जल प्रदूषण जैसे प्रकरणों को भी याद करते हैं जबकि इस जैसे मुद्दों पर विद्यार्थियों को ऐसे प्रोजेक्ट या टास्क दिए जा सकते हैं जिनमें वे जल से जुड़े मुद्दों पर काम करें। वे देखें कि जल किस-किस काम आता है, कहाँ बर्बाद हो रहा है, कहाँ जल प्रदूषण हो रहा है, और क्या इसके कोई समाधान हो सकते हैं। दूसरा पहलू यह कि कक्षा में समूह में काम हो। समूह में विचार, चिन्तन-मनन, विचारों को साझा करना, और सुनना हो। बच्चों की सोच के दायरे इतने सीमित न हों कि वे दूसरे के तर्कों को समझने की कोशिश ही न करें। और तीसरा, दूसरे विषयों के साथ जुड़ाव भी बहुत अहम है।

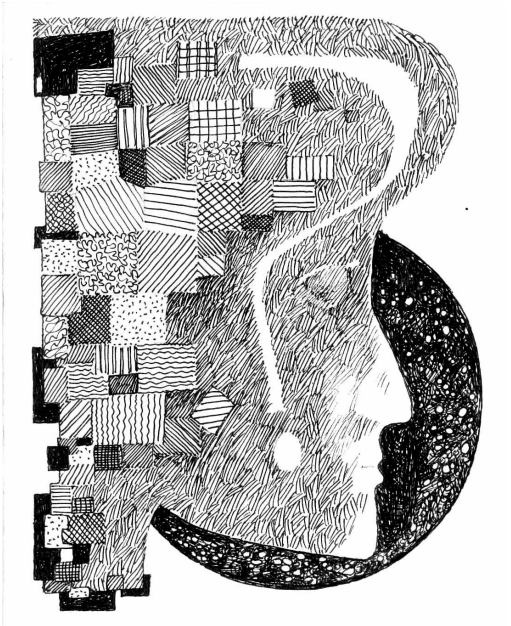

चित्र : प्रशांत सोनी

मुकेश पाटक : अकसर स्कूलों में (प्राथमिक हों या उच्च माध्यमिक) पीयर लर्निंग नज़र नहीं आती है। समूह में मिलकर काम करना, एक दूसरे से अपने अवलोकनों के बारे में बातचीत करना, एक दूसरे की मदद करते हुए अपने अवलोकन लिखना, साथियों से अवलोकन के बारे में चर्चा करना, मिलकर कोई प्रोजेक्ट करना, यह शायद होता ही नहीं है। वैज्ञानिक नज़रिए में यह शामिल है कि एक दूसरे की बात को, तर्कों को ध्यान से सुना जाए, उनको परखा जाए, और तब उनके प्रकाश में निर्णय लिया जाए।

राकेश तिवारी : क्या आज की पाठ्यपुस्तकें सही मायने में वैज्ञानिक चेतना का विकास करने का प्रयास करती हैं? क्या पाठ्यपुस्तकों की कमी को शिक्षक के बेहतर दृष्टिकोण व बेहतर पेडोगॉजी ऑफ़ साइंस टीचिंग से सन्तुलित कर सकते हैं? मंजूजी, आपके विचार चाहेंगे।

मंजू : आज की पाठ्यपुस्तकों में बहुत-से सकारात्मक बदलाव हुए हैं। जैसे बच्चों के सोचने के लिए, सवाल करने के लिए, खोजने के लिए, प्रयोग करने के लिए पाठ्यपुस्तकों में अधिक जगह बनी है। ऐसे प्रोजेक्ट और टास्क हैं जिनमें बच्चों को न सिर्फ़ जानने-समझने

बल्कि चीज़ों को परखने का मौक़ा भी मिले। शिक्षक चाहे तो एक बेहतर दृष्टिकोण और सीखने-सिखाने के बेहतर तरीक़ों का इस्तेमाल करते हुए बच्चों में एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण निर्मित करने का काम कर सकता है। इसमें सबसे महत्त्वपूर्ण होगा बच्चों की जिज्ञासा को, उनके सवालों को, भ्रमों को जगह देना, और बच्चों में जो जिज्ञासा होती है उसको बनाए रखना। ऐसे में विद्यार्थी बार-बार सवाल कर पाएँगे– क्यों, क्या, कैसे? दूसरा, विद्यार्थियों में पढ़ाई के प्रति रुझान उत्पन्न करें। विभिन्न प्रकार की गतिविधियाँ कक्षा में हों, और विद्यार्थियों में निरन्तर अध्ययन करने की आदत बने और बनी रहे। हम पाठ्यपुस्तक पढ़ाएँ, लेकिन बच्चों को उसपर भी सवाल करना सिखाएँ। उनकी निर्णय लेने की क्षमता को विकसित करें। ऐसा न हो कि किसी भी बात को बिना सोचे-विचारे मान लें। होमवर्क इस ढंग का हो कि उसमें तर्क व तर्क करने के कौशल आ जाएँ, और वे वैज्ञानिक ढंग से कुछ विचार उत्पन्न कर पाएँ। ऐसी बहुत-सी चीज़ें हैं जिनको करते हुए शिक्षक पाठ्यपुस्तक की कमी को बिलकुल सन्तुलित कर सकता है। साइंटिफ़िक टेम्परामेंट यही कहता है कि हमारा दिमाग़ खुला हो, और किसी भी चीज़ को हम ऐसे ही न मानें, उसके पीछे तर्क ज़रूर हो।

राकेश तिवारी : पहली बात यह कि कक्षा में सीखने-सिखाने के बेहतर तरीक़े क्या हों। दूसरा, कक्षा की कुछ चुनौतियाँ भी हैं, जैसे– सामान उपलब्ध न होना, कक्षा में बच्चों की संख्या का अधिक होना, आदि। इस सन्दर्भ में विज्ञान सीखने-सिखाने के तरीक़ों के बारे में आप कुछ आयाम बता सकती हैं?

हुमा नाज़ सिद्दीकी : बहुत-से स्कूलों में एक या दो शिक्षक ही होते हैं। वे ही सभी विषय पढ़ाते हैं, लेकिन तब भी ऐसी कई चीज़ें हैं जो स्कूल में की जा सकती हैं, और शिक्षक करते भी हैं। ऐसे शिक्षक जो शिक्षण को एक समग्र दृष्टिकोण में देखते हैं, वे उस विषय के साथ-साथ दूसरे विषयों को भी एकीकृत करते हैं। उदाहरण के लिए, सामाजिक विज्ञान और विज्ञान में जलवायु परिवर्तन जैसे कुछ प्रकरण होते हैं जहाँ दोनों विषयों को मिलाकर पढ़ाया जा सकता है। माने, जलवायु परिवर्तन कैसे होता है, और उसके सामाजिक प्रभाव क्या हैं?

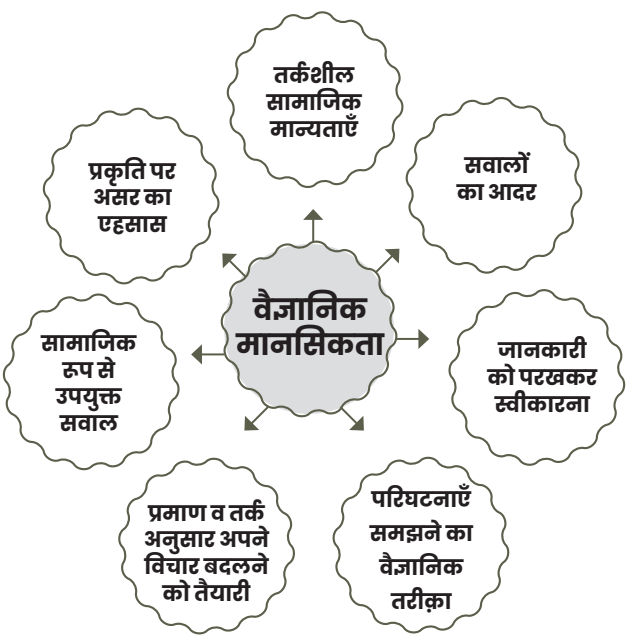

विज्ञान का अर्थ सिर्फ़ प्रयोग करना ही नहीं है। विज्ञान करने का आशय यह भी है कि बच्चे विज्ञान पढ़ पाएँ, लिख पाएँ, परिकल्पनाएँ बना पाएँ, और उन परिकल्पनाओं की जाँच करने के तरीक़ों के बारे में सोच पाएँ। अकसर कक्षा तीन व चार में बच्चों को सिखाया जाता है कि पत्तियों का रंग हरा होता है। बच्चे जानते हैं कि सभी पत्तियों का रंग हरा नहीं होता, लेकिन इसपर कक्षा में चर्चा नहीं होती। ऐसे ही कई तथ्य पढ़ा दिए जाते हैं। हम बच्चों को सवाल दे सकते हैं जिनके जवाब वो ख़ुद अपने परिवेश में जाकर खोजें। मुझे लगता है कि यह शिक्षक की और बेहतर तैयारी की भी माँग करता है। जहाँ पर बच्चे

चित्र : प्रशांत सोनी

ख़ुद से अपने सवालों के जवाब ढूँढ़ सकते हैं और शिक्षक की भूमिका मार्गदर्शक के तौर पर है।

राकेश तिवारी : आख़िरी सवाल, वैज्ञानिक दृष्टिकोण समाज, सामाजिक-सांस्कृतिक मान्यताओं व आस्था के बीच किस प्रकार नेविगेट कर सकते हैं। यह कहा जाता है कि विज्ञान तर्क करने, खोजने, और जिज्ञासु बनने में हमारी मदद करता है, पर क्या यह गुण वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास के लिए पर्याप्त है? हुमाजी, इसपर आपके विचार चाहूँगा।

हुमा नाज़ सिद्दीकी : यह सवाल काफ़ी जटिल, रोचक और साथ-साथ संवेदनशील भी है। अन्ततः उपरोक्त सभी मुद्दे हमारे परिवेश और सामाजिक क्रियाओं से जुड़ते हैं। आख़िर शिक्षा, समाज, शिक्षक सब जुड़े हैं। वैज्ञानिक दृष्टिकोण, सामाजिक-सांस्कृतिक मान्यताओं या आस्थाओं के बीच नेविगेट करना बेहद महत्त्वपूर्ण है, और जटिल भी। इसके लिए सिर्फ़ आलोचनात्मक सोच या फिर समस्या समाधान के कौशल पर्याप्त नहीं हैं बल्कि यह एम्पथी, सहानुभूति, जैसे गुणों की माँग करता है। इसमें किसी व्यक्ति विशेष के सामाजिक उत्तरदायित्व की बात शामिल होगी, और तथ्यों, विश्वास व मान्यताओं के बीच सन्तुलन बनाना भी। उदाहरण के लिए, मैं जहाँ रहती हूँ वो आदिवासी बेल्ट है। वहाँ लोगों की अपनी-अपनी मान्यताएँ हैं। कई समाजों में किसी ख़ास पेड़ की पूजा की जाती है। एक तरह से इसमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण है क्योंकि कई पेड़ों में औषधीय गुण होते हैं, और वैसे भी पेड़-पौधे हमारे व दूसरे पशु-पक्षियों के जीवन के लिए अनिवार्य हैं। यह समझना होगा कि पेड़ के प्रति आस्था की भावना समाज में विकसित करवाने के कई तरह के कारण हो सकते हैं, और यह कोएक्ज़िस्ट कर सकते हैं। कोशिश रहे कि किसी की आस्था या मान्यता को ज़्यादा ठेस भी न पहुँचे, और जो वैज्ञानिक गुण हैं या उसके पीछे जो तर्कसंगतता है वो भी सामने लाई जा सके। इसमें साक्ष्य-आधारित बातचीत बेहद महत्त्वपूर्ण है। कोविड के वैक्सीनेशन के दौरान भ्रान्तियाँ थीं कि वैक्सीन से तमाम तरीक़े की बीमारियाँ हो जाएँगी, लेकिन साक्ष्य-आधारित परिणामों ने धीरे-धीरे लोगों में वैक्सीन स्वीकरण का दायरा बढ़ाया। अतः मुझे साक्ष्य-आधारित बातचीत करना, विश्वास, और तथ्य के साथ एक तालमेल बना पाना बेहद महत्त्वपूर्ण हिस्सा लगता है।

आपका दूसरा सवाल था कि क्या सिर्फ़ तर्क करना, खोज करना, जिज्ञासा, जिज्ञासु प्रवृत्ति का होना ही महत्त्वपूर्ण है। मुझे लगता है यह पर्याप्त नहीं होगा। इसके साथ आलोचनात्मक चिन्तन होना, खुला दिमाग़, सहानुभूति, संवेदनशीलता होना भी ज़रूरी है। जैसे कि एक उदाहरण अभी मुझे याद आ रहा है। पहले यह माना जाता था कि पृथ्वी ब्रह्माण्ड का केन्द्र है। उस समय गैलीलियो और कोपरनिकस ने इस तथ्य पर सवाल उठाए, और उसकी सत्यता की जाँच

करनी चाही। उन्होंने धीरे-धीरे शोध करते हुए बताया कि पृथ्वी ब्रह्माण्ड के केन्द्र में नहीं है। उन्हें काफ़ी प्रोटेस्ट का सामना करना पड़ा, और कई तरीक़ों से उन्हें प्रताड़ित किया गया। यह पहलू भी है कि तर्क तो करना है, लेकिन उस तर्क को स्वीकार करने के लिए समाज के लोगों में भी साइंटिफ़िक टेम्परामेंट होना बहुत ज़रूरी है। साथ ही, दूसरों के प्रति संवेदनशील हों, उनके तर्क, विचार के पीछे के कारणों को समझने की, उसकी सत्यता की जाँच करने की तैयारी हो। यक़ीनन यह जटिल प्रक्रिया है, मगर इसके बीच नेविगेट किया जा सकता है।

राकेश तिवारी : राधिकाजी, इसमें आप कोई बात जोड़ना चाहेंगी?

राधिका महोबिया : यहाँ पर संस्कृति और मान्यताओं की बात आई है। मुझे लगता है अन्धविश्वास और रूढ़िवादिता क्या हैं, इनपर बात होनी चाहिए। एक उदाहरण देना चाहूँगी। हमारे स्कूल में बहुत-से बच्चे सोमवार को व्रत रखते हैं। व्रत के लिए उनका पूरे गाँव में फूल ढूँढ़ने का अभियान चलता है। धतूरा का फूल चाहिए, कनेर का फूल चाहिए, बेल पत्र चाहिए। आप पूछेंगे कि यही फूल क्यों चाहिए। वे कहते हैं कि दूसरा फूल चढ़ाने से भगवान ख़ुश नहीं होंगे। आस्था का सवाल है। फूल, पेड़-पौधे, जीव-जन्तु ही हमारा इकोसिस्टम हैं, और इसमें सबकी अपनी भूमिका है, इसपर बात हो सकती है। और फिर फूल क्या हैं इसपर भी बात हो सकती है।

राकेश तिवारी : बच्चों में वैज्ञानिक मानसिकता विकसित हो पाए इसके लिए स्कूल कक्षाओं में किस तरह के प्रयास होने चाहिए?

राधिका महोबिया : एक सोमवार को स्कूल में बहुत कम बच्चे आए। जब मैंने कारण जानने की कोशिश की तो स्कूल के रसोइए ने बताया कि रविवार की रात में जब वह स्कूल के पास से गुज़रा तब पीछे से किसी ने उसके ऊपर झपट्टा मारा। वो दौड़कर सीधा झाड़-फूँक करने वाले के पास गया। झाड़-फूँक करने वाले ने बताया कि बहुत पहले एक बार स्कूल के कुएँ में 9 साल की एक बच्ची गिर गई थी, और उसकी मृत्यु हो गई थी। उसी लड़की की आत्मा स्कूल में भटक रही है, और लोगों को खींचकर अपने पास लेकर जा रही है। यह एकदम संवेदनशील मुद्दा बन गया था। गाँव वाले भी यहाँ पर आ गए कि मैडम, देखिए इस तरह की घटना हो रही है, और बच्चे स्कूल आने से डर रहे हैं। मैंने सभी लोगों को बुलाकर इस मुद्दे पर चर्चा की। स्कूल के पास एक पीपल का पेड़ है जिसपर अकसर बहुत सारे बन्दर रहते हैं। फिर मैंने बताया कि हो सकता है, रविवार के दिन जब रसोइया सामान लेकर जा रहा हो तो बन्दर ने ही झपट्टा मारा हो। देखा तो है नहीं कि किसने आपको खींचा। लोग बोले, हाँ, बात तो सही है। दूसरा इतने वर्षों से तो हम आ रहे हैं। यहाँ रात में भी कई बार आठ-आठ, नौ-नौ बजे तक रुके हैं, किसी तरह की कोई घटना नहीं घटी। इस तरह से उस समय जो अफ़वाह फैली थी वो दूर हुई।

किसी भी चीज़ को मानने से पहले यह पूछना ज़रूरी है कि ऐसा क्यों हो रहा है, और कारणों को जानने की कोशिश करनी चाहिए।

सवाल सभी पूछते हैं। लेकिन अगर सवाल का सही दिशा में उत्तर नहीं मिलता है, हम किसी मान्यता को मान लेते हैं।

उस दिन के बाद से आज तक किसी बच्चे ने झाड़-फूँक या भूत-प्रेत के बारे में बात नहीं की है। यानी, हम व्यवहारिक तरीक़े से बच्चों को समझाएँ तो बातें ज़्यादा प्रभावी रहेंगी।

राकेश तिवारी : विज्ञान, वैज्ञानिक मानसिकता और पाठ्यपुस्तकों के बारे हुई इस चर्चा में कई आयामों पर बात हुई। इस सन्दर्भ में आलोचनात्मक सोच, तार्किक सोच, विश्लेषण की बात बार-बार आई। इसके साथ ही एक महत्त्वपूर्ण बात यह निकल रही थी कि वैज्ञानिक चिन्तन, वैज्ञानिक मानसिकता जीने का एक तरीक़ा है, और इसीलिए यह सिर्फ़ विज्ञान पढ़ने या सीखने तक सीमित नहीं है। ये दूसरे विषयों के साथ-साथ हम जिस समाज में रहते हैं, हमारे समाज में जिस तरह की सांस्कृतिक परम्पराएँ होती हैं, हमारा जो वातावरण है, उन सबके दायरों में शामिल है, और हमें चीज़ों को इस नज़रिए से ही देखना चाहिए।

वैज्ञानिक चिन्तन, वैज्ञानिक मानसिकता जीने का एक तरीक़ा है, और इसीलिए यह सिर्फ़ विज्ञान पढ़ने या सीखने तक सीमित नहीं है। ये दूसरे विषयों के साथ-साथ हम जिस समाज में रहते हैं, हमारे समाज में जिस तरह की सांस्कृतिक परम्पराएँ होती हैं, हमारा जो वातावरण है, उन सबके दायरों में शामिल है, और हमें चीज़ों को इस नज़रिए से ही देखना चाहिए।

स्कूल और कक्षा से सम्बन्धित भी बहुत सारी बातें रखी गईं। हमारी समझ हमारे कुछ अवलोकनों से बनती है, लेकिन यह भी महत्त्वपूर्ण है कि चीज़ों को देखने का नज़रिया खुला हो, और जो भी नई जानकारी आती है हम उसको जाँच-परखकर ग्रहण करें। अगर नई जानकारी हमारे मौजूदा ज्ञान के साथ विसंगति रचती है तब उस समझ को बदलने को भी तैयार हों। हो सकता है, फिर से अवलोकन करने की भी ज़रूरत महसूस हो तो वह किया जाए। कक्षा में संवाद हो, बच्चों को सवाल पूछने, राय रखने, और अपने भ्रम रखने का मौक़ा दिया जाए। अभ्यास कार्य ऐसे दिए जाएँ जिनमें बच्चों को अवलोकन करने, एक्सप्लोर करने, और एक दूसरे से तर्क करने के मौक़े मिलें।